पहली भारतीय शिक्षिका

सावित्रीबाई फुले

पुस्तिका सीरीज़-96

प्रकाशक :

***isd* इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**

फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस, 62-ए,

लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली-110067

टेलीफोन : 091-011-26177904, टेलीफैक्स : 091-011-26177904

ई-मेल : prakashan.isd@gmail.com, notowar.isd@gmail.com

वेबसाइट : www.isd.net.in

प्रकाशन वर्ष : 2022

दो शब्द

इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी प्रसिद्ध समाज सुधारक, नारी शिक्षा और सशक्तिकरण की सूत्रधार और भारत की पहली शिक्षिका सावित्रीबाई फुले की 125वीं पुण्यतिथि पर उनके जीवन और कार्यों पर आधारित ये पुस्तिका प्रस्तुत कर रही है जो पहली बार मूल रूप से 1966 में मराठी में प्रकाशित हुई थी और जिसका हिंदी अनुवाद सेंटर फॉर ऑल्टरनेटिव दलित मीडिया (कदम) के द्वारा सामने आया था। हम कदम का आभार व्यक्त करते हुए इसे दोबारा प्रकाशित कर रहे हैं।

पहली भारतीय शिक्षिका
सावित्रीबाई फुले

सम्पादन
रजनी तिलक

मूल मराठी लेखिका
सौ. फुलवंताबाई झोडगे

हिंदी अनुवाद
रवींद्र 'शलभ' और शेखर पंवार

सेन्टर फॉर ऑल्टरनेटिव दलित मीडिया (कदम), दिल्ली

कथावस्तु

क्रान्ति ज्योति सावित्रीबाई फुले का जीवन किसी गहन सरोवर में खिलने वाले सुंदर कमल पुष्प की तरह है। जिस प्रकार सरोवर का स्वच्छ निर्मल जल पीकर कमल बड़े गर्व से पानी की सतह पर तैरता है उसी प्रकार महात्मा ज्योतिराव फुले के जीवन रूपी सरोवर में संचित उत्तम विचारों का जल पीकर सावित्रीबाई फुले ने भी अपना जीवन पुष्प विकसित किया। सावित्रीबाई का जीवन सचमुच किसी प्रकाशमान हीरे के समान था। चमकदार हीरे की तेजस्विता की ओर दुनिया का ध्यान आकर्षित करने के लिए जरूरी है कि उसे दुनिया के सामने लाया जाए। इसके लिए उसे भूगर्भ से बाहर निकाला जाता है। उसके तेज को चमकाने के लिए उसे तराशा जाता है। यह काम तो कुशल कारीगर ही कर सकता है। इस दृष्टि से महात्मा ज्योतिराव फुले एक कुशल कारीगर कहे जा सकते हैं। उन्होंने इस बहुमूल्य हीरे को परख कर, शिक्षा तथा संस्कारों से परिपूर्ण कर उसके वास्तविक तेज को दुनिया के सामने उजागर किया। इसीलिए महाराष्ट्र की जनता सावित्रीबाई फुले जैसी आदर्श और विद्वान सामाजिक कार्यकर्ता महिला के वात्सल्य

से लाभान्वित हो सकी। सही मायने में तो ज्योतिबा फुले ने दोहरी भूमिका निभायी। स्वयं उनका जीवन भी लोकहित के प्रति समर्पित था। 'खुद जैसा तुरन्त बनाएँ' यह संत तुकाराम महाराज की सूक्ति उनके बारे में पूरी तरह चरितार्थ होती है। उन्हीं की तरह सावित्रीबाई भी एक कर्मठ समाज सेविका के रूप में उभरी।

कहते हैं कि पारस के स्पर्श से लोहा भी सोना बन जाता है। किन्तु सोना बनाने के लिए पारस को लोहे के करीब लाने के बावजूद उसका स्वर्णत्व स्वीकार करने के लिए लोहे का भी अपना गुण मौजूद होना चाहिए। महात्मा फुले की तरह अन्य लोगों ने भी कोशिश की होगी कि उनकी पत्नी भी एक अच्छी समाज सेविका बने। स्त्रियों को गर्व होना चाहिए कि क्रान्तिसूर्य ज्योतिबा फुले के अथक प्रयासों से क्रान्ति ज्योति सावित्रीबाई फुले नारी उत्थान की प्रवक्ता बन गईं। इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि पारस की श्रेष्ठता तो थी ही, लोहा भी उतना ही उच्च कोटि का था।

सावित्रीबाई का जन्म 3 जनवरी, 1831 को महाराष्ट्र के सतारा जिले में हुआ। उस जमाने को, नारी वर्ग की दृष्टि से एक नैराश्य युग ही कहा जा सकता है। स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का कोई अधिकार न था। उस समय बाल विवाह का प्रचलन था। खेलने-खाने की उम्र में उन्हें सास, ननद, जिठानी की घुड़कियाँ सहनी पड़ती थीं। स्त्रियां केवल मंदिर में भगवान के दर्शन के लिए ही घर से बाहर कदम निकाल सकती थीं। उनके किसी भी प्रकार के विचारों की अभिव्यक्ति पर पाबन्दी थी। बड़े घरानों की बहू-बेटियों पर बंदिशें और भी ज्यादा थीं। उस जमाने में उन्हें यही नसीहत मिलती रही कि उनका जीवन केवल परिवारजनों की सेवा करना, बाल-बच्चों का लालन-पालन, भरण-पोषण और चौका-रसोई तक ही सीमित था।

नौ वर्ष की अल्पायु में सावित्रीबाई फुले का ज्योतिराव फुले से विवाह हुआ। विवाह के बाद परम्परानुसार वह ससुराल आई और परम्परागत विचार से अलग प्रगतिशील विचारों से ओत-प्रोत ज्योतिराव फुले का साथ मिला। इस प्रकार सावित्रीबाई का जीवन प्रवाह ज्योतिराव जी के जीवन सरिता में मिलकर एकप्राण हो गया।

उस जमाने में बहुजन समाज में शिक्षा लेना महापाप माना जाता था। ऐसे विपरीत समय में सावित्रीबाई ने शिक्षा ग्रहण करने का दृढ़ निश्चय किया इससे नारी वर्ग को एक अनूठी प्रेरणा मिली।

क्रान्ति ज्योति का जन्म

एक जनवरी 1818 में जनता विरोधी ब्राह्मण हितैषी पेशवा राज्य का अंत हुआ। अंग्रेजी सरकार धीरे-धीरे सारी जनता को गुलामी की जंजीरों में जकड़ने में सफल हो गई और देखते-ही-देखते सारे भारत में उनकी सार्वभौम सत्ता कायम हो गई। चारों ओर अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार होने लगा। लोग अंग्रेजी भाषा से इतने प्रभावित हुए कि उसे 'शेरनी का दूध' कहने लगे। अंग्रेजी का ज्ञान प्रतिष्ठा की बात मानी जाने लगी।

यह वह जमाना था जब बहुजन समाज को सीधी-सादी मराठी भाषा भी ठीक ढंग से लिखनी नहीं आती थी। समाज पूरी तरह अज्ञान के अंधकार में था। नारी शिक्षा की बात तो दूर, बहुजन समाज के पुरुषों का शिक्षा ग्रहण करना भी पाप माना जाता था। आज समाज में हर स्तर की महिलाएँ उच्च शिक्षा सम्पन्न नजर आती हैं, किंतु सावित्रीबाई फुले के जमाने में दलित या बहुजन ही नहीं बल्कि सामान्य ब्राह्मण परिवारों में भी पढ़ी-लिखी बालिका नजर नहीं आती थी। ऐसे विपरीत समय में सावित्रीबाई ने शिक्षा ग्रहण कर केवल अपने ज्ञान की ही बढ़ोतरी

नहीं की बल्कि दलितों व महिलाओं के उद्धार के लिए शिक्षा का प्रचार व प्रसार भी किया। इस कार्य के लिए उन्होंने बहुत कष्ट उठाए, तकलीफें झेली और इतिहास के पन्नों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। सावित्रीबाई फुले को पहली शिक्षित महिला, शिक्षिका और भारत की पहली महिला कार्यकर्ता कहें तो अतिश्योक्तिपूर्ण बात न होगी। उनका जीवन चरित्र मार्गदर्शक व प्रेरणादायी है।

महाराष्ट्र के सतारा जिले में, खंडाले पेठ के शिखल गांव से लगभग पाँच किलोमीटर के फासले पर नायगाँव नामक गांव के नेवसे पाटिल के घर दिनांक 3 जनवरी 1831 के दिन सावित्रीबाई का जन्म हुआ। इनकी माता का नाम लक्ष्मीबाई और पिता का नाम खंडोजी था। उस समय क्रूर पेशवा राज्य की समाप्ति और अंग्रेज हुकुमत के तेरह वर्ष हुए थे।

सावित्री अपनी माँ के समान गौरवर्ण व सुन्दर और पिता के समान सुदृढ़ व निरोगी प्रकृति की थी। उसके बचपन के प्रसंग बहत ही मनभावन हैं। बचपन से ही सावित्री कभी झूठ नहीं बोलती थी, न ही किसी का मजाक उड़ाती थी। उसके साथ किसी ने झूठ बोला या उसकी खिल्ली उड़ाई तो वह सहन नहीं कर पाती थी। आमतौर पर उसका सभी से स्नेहपूर्ण बर्ताव होता था। यदि किसी बलवान लड़के ने किसी कमजोर बालक को सताया तो उसे बहुत गुस्सा आता था। एक बार भैंरो बाबा के मंदिर में एक छोटा बच्चा हाथ में गुलाब का फूल लिए बैठा था। एक रौबीले लड़के ने उस बच्चे के हाथ से फूल छीन लिया छोटे बच्चे की हिम्मत न हुई कि उस ताकतवर लड़के से फूल मांग सके। अब वह रोने लगा। सावित्री व उसकी सहेलियाँ यह सब देख रही थी। सावित्री ने उस नटखट लड़के से पूछा कि उसने फूल क्यों लिया। वह लड़का उम्र में सावित्री से भी बड़ा था। वह सावित्री से गुर्राकर बोला 'तू पूछने वाली कौन होती है? तू क्या उसकी बहिन है?' 'हाँ, हाँ, मैं उसकी बहिन हूँ, पहले उसका फूल लौटा दे', यों कहते-कहते सावित्री ने वह फूल लड़के के हाथ से छीन कर बालक को दे दिया और लड़के को भगा दिया। तब से नटखट व शैतान बच्चे उससे डरने लगे और कमजोर बच्चे उसे अपना पक्षधर मानकर चाहने लगे। छः साल की उम्र से ही सावित्री खेती बाड़ी के कामों में हाथ बंटाने लगी थी। मवेशियों की देखभाल करना और गाय-भैंस का दूध दोहना वह जल्द ही सीख गई।

वह कुएँ में तैरने में माहिर थी। रहट के पहिए पर खड़ी होकर कुएँ में छलाँग लगा देती और तलहटी की माटी मुट्ठी में ले आती। गुलेलबाजी मे भी वह तेज थी। पत्थर का अचूक निशाना मारकर पेड़ो से इमली या पका आम गिरा लेती। उसके इस साहस से उस पर कई संकट आए पर उसने उन्हें सहजता से निभाया।

एक बार सावित्री सहेलियों के साथ जंगल में आम खाने गई थी। एक पेड़ पर पक्षी चहचहा रहे थे। तभी एक साँप को पक्षियों के घरौंदों की ओर अंडे खाने के लिए जाता हुआ देख कर सभी बच्चे सहम गए। सावित्री ने तुरंत एक नुकीला पत्थर निशाना साधकर साँप के सिर पर मारा। दूसरे ही क्षण साँप ने बच्चों पर आक्रमण किया। बच्चे घबराकर भाग खड़े हुए और गाँव वालों को बुलाकर पेड़ के पास ले आए। सभी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि सावित्री पेड़ से टूटी टहनी से साँप को मारते हुए कह रही थी—'बदमाश, उन निरीह पक्षियों के अंडे खाने जा रहा था?' पाटिल ने झट से सावित्री को गोद में उठा लिया और एक बड़े भारी संकट से बचने पर भगवान को हाथ जोड़े।

सावित्री बुद्धि से बहुत कुशाग्र थी। साथ ही स्वभाव से जिद्दी और कुछ गुस्सैल भी थी। दूसरों पर रौब जमाना उसे अच्छा लगता था। वह नटखट भी बहुत थी। बचपन में वह चंचल थी, कभी एक जगह चैन से पल भर भी नहीं बैठती थी और मेहनती इतनी थी कि आलस क्या होता है यह जानती तक न थी। उम्र के साथ ही उसमें होशियारी और चतुराई भी बढ़ रही थी। अपनी जिज्ञासा ओर तेजतर्रार प्रवृति के कारण बाजार-हाट भी अकेली हो आती थी।

एक बार सावित्री शिखल नामक गांव के बाजार गई। वहाँ जलेबी और पकोड़े खरीद कर खाने बैठी, खाते-खाते उसने देखा कि एक पेड़ के नीचे कुछ मिशनरी (ईसाई) पुरुष व औरतें गाना गा रहे हैं। एक लाट साहब ने उसे पकौड़े खाते हुए देख और ठिठककर गाना सुनते हुए देखकर कहा—'बिटिया, इस तरह रास्ते में खाते-खाते घूमना अच्छी बात नहीं है।' यह सुनते ही सावित्री ने शेष भुजिया फेंक दी। लाट साहब ने कहा—'कितनी अच्छी लड़की हो तुम। यह जो तुम्हें पुस्तक देता हूँ तुम्हें पढ़ना न आए तो भी कोई बात नहीं। इसमें जो चित्र हैं उसे देखकर तुम्हें अवश्य खुशी होगी और तुम यह मिठाई घर ले जाकर खा लेना।'

घर आकर सावित्री ने वह पुस्तक और मिठाई खुशी से अपने पिता को

दिखाई। तैश मे आकर उन्होंने वह सब कूड़े में फेंक दिया और गुस्से से डांटने लगे—'ईसाइयों से ऐसी चीजें लेकर तू भ्रष्ट हो जाएगी और सारे कुल को भ्रष्ट करेगी। तेरी जल्दी ही शादी कर देनी चाहिए।' सावित्री की पुस्तक को देखने की जिज्ञासा रूक न सकी। चुपचाप उसने वह पुस्तक उठा ली और घर के एक कोने में छुपा कर रख दी। आगे ज्योतिराव से विवाह होने पर वह अपने सामान के साथ उस किताब को हिफाजत से ससुराल ले आयी और शिक्षा ग्रहण करने के बाद उसने वह पुस्तक पढ़ी।

तत्कालीन समाज में छह वर्ष की उम्र की लड़की और दस वर्ष की उम्र का लड़का अविवाहित रह जाए तो उनको समाज घृणा की दृष्टि से देखता था। किन्तु इसके बावजूद सावित्री के पिता ने अपनी लाड़ली बिटिया की शादी उस जमाने में काफी विलम्ब से ही की थी। विवाह के समय सावित्री की उम्र नौ वर्ष और ज्योतिराव फुले की उम्र बारह वर्ष थी। ज्योतिराव फुले के घर में सावित्रीबाई फुले के अतिरिक्त अन्य महिला नहीं थी। घर में केवल ज्योतिराव फुले और उनके पिता गोविंदराव ही रहते थे। गोविंदराव को किसी अन्य व्यक्ति के हाथों का पकाया खाना पसन्द न था। इसलिए वे खुद खाना पकाते, तब कहीं जाकर बाप-बेटे दोनों भोजन करते।

ज्योतिराव फुले ईसाई मिशनरियों की पाठशाला में पढ़ने जाते थे। ज्योतिराव फुले का पाठशाला में पढ़ने जाना लोगों को धर्म के विपरीत लगता था। लोग उनके पिता गोविंद राव को भला बुरा कहने लगे। इससे तंग आकर उन्होंने ज्योतिराव को पाठशाला से निकाल लिया और खेतीबाड़ी में लगा दिया। अब ज्योतिराव दिनभर खेत में काम करते। गांव में जाने पर वे केवल अपनी मौसेरी बहन सगुणाबाई के घर ही खाना खाते थे। उनकी माँ का देहान्त नौ माह की उम्र में हो गया था। अत: दो-ढाई वर्ष की उम्र तक उनका लालन-पोषण ठीक से नहीं हो पाया। किंतु बाद में ज्योतिराव की मौसेरी बहन सगुणाबाई द्वारा जिम्मेदारी उठाने के बाद उनकी परवरिश ठीक ढंग से होने लगी। सगुणाबाई को वे बचपन से 'आऊ' कहते थे। सगुणाबाई ने भी उन्हें माँ का प्यार दिया। उनके प्रति ज्योतिराव के मन में इतना आदर और स्नेह था कि उनके बिना वे एक दिन भी न रह पाते। सगुणाबाई उन्हें हमेशा पढ़ने-लिखने का उपदेश देती थीं। एक बार उन्होंने ज्योतिराव को कहा—'अरे

ज्योति सावित्री को और कितने दिन मैके में रहने दोगे? जाकर उसे घर ले आओ। घर में कोई महिला न हो तो, वह मेरे साथ रह लेगी। तुम तो मेरे अपने हो। यहाँ आने के बाद वह तुम्हें खेती बाड़ी के कामों में सहायता भी करेगी, फिर तुम्हें पढ़ने-लिखने के लिए समय भी मिल सकेगा।'

सगुणाबाई की इस आग्रहपूर्ण सलाह को ज्योतिराव ने मानकर पिता की अनुमति के बाद सावित्रीबाई को लिवा लाए। सावित्रीबाई भी खेत खलिहान में काम करने की अभ्यस्त थी। सगुणाबाई के यहाँ घर के काम निपटाकर वह खेत में काम करती। अपने मेहनती और सीधे-साधे स्वभाव के कारण उन्होंने सगुणाबाई का दिल जीत लिया। सगुणाबाई के स्नेह-सान्निध्य में उनको शिक्षा ग्रहण करने और समाज सेवा करने की प्रेरणा मिली।

1842 मे लिजिट साहब की सहानुभूति के कारण ज्योतिराव को सरकारी स्कूल में दाखिला मिल गया। वे पुन: स्कूल जाकर अंग्रेजी पढने लगे। अपने छात्र जीवन से ही उन्होंने समाज सेवा का जो पहला काम प्रारंभ किया वह था अपनी पत्नी को शिक्षित करना। इस प्रकार सावित्रीबाई की शिक्षा-दीक्षा प्रारम्भ हुई। उन्होंने भी पढ़ने-लिखने में किसी प्रकार की आनाकानी नहीं की। खुद पढ़ना और औरों को पढ़ाना, ज्योतिराव फुले की यह जीवन निष्ठा ध्यान में रखकर खुद वह इसमें जुट गईं और पढ़ाई की। जल्द ही उन्होंने मराठी के साथ-साथ अंग्रेजी का ज्ञान भी हासिल कर लिया। छोटी उम्र में उन्होंने नारी शिक्षा के प्रचार-प्रसार का बीड़ा उठाया। उनका जीवन चरित्र एक आदर्श महिला कार्यकर्ता के रूप में सदियों याद किया जाएगा। आज की समाज सेविकाओं के लिए भी वे एक आदर्श मार्गदर्शक हैं।

म. ज्योतिराव फुले ने 20 वर्ष की उम्र में मैट्रिक्युलेशन की परीक्षा पास की। इसके बाद आपने एक मित्र की सहायता से दिनांक 14 जनवरी 1848 के दिन पुणे के बुधवार पेठ निवासी भिडे के बाड़े में कन्याशाला की स्थापना की। इस प्रकार लड़कियों की शिक्षा की भारतवर्ष में यह पहली पाठशाला थी। सावित्रीबाई को इस पाठशाला की मुख्याध्यापिका नियुक्त किया गया। तब तक भारत की किसी महिला को शिक्षक बनने का अवसर नहीं मिला था। इस तरह सावित्रीबाई सारे भारत की पहली शिक्षिका थी।

यह पाठशाला प्रारंभ करने में संस्थापकों को जितने कष्ट उठाने पड़े उससे

कहीं ज्यादा कठिनाई और यातना सावित्रीबाई को पाठशाला चलाने में हुई। उन पर अनेक संकट आए। कई इल्जाम लगाए गए व उनके खिलाफ कई षडयंत्र रचे गए। यहां तक कि पाठशाला के लिए अध्यापक मिलना कठिन हो गया। कन्याओं की पाठशाला जानकर कोई भी पुरुष पाठशाला में नौकरी करने को तैयार न होता था। ना ही कोई अपनी लड़की को उस पाठशाला में पढ़ने भेजता। उस जमाने के लोगों की धारणा यह थी कि लड़कियों का पाठशाला जाना और शिक्षा ग्रहण करना लड़कियों को कुमार्ग की ओर ले जाने वाला एक घृणित कदम है। कई लोग तो यह मानते थे कि लड़की को पाठशाला में भेजना धर्म के विपरीत है। कन्या पाठशाला चलाने में इस प्रकार का प्रतिकूल वातावरण था। लोग सावित्रीबाई की हँसी उड़ाते थे। कई बार तो उन पर गोबर, पत्थर आदि फेंके गए। किन्तु सावित्रीबाई इन सब को सहन करते हुए अपना कार्य करती रहीं।

ज्योतिराव के कई मित्र थे। कइयों की छोटी-छोटी लड़कियाँ थी। उन लड़कियों को ही पहले अपनी पाठशाला में लाकर पढ़ाने का सावित्रीबाई ने निश्चय किया। वे पाठशाला में उन लड़कियों को रोज घर लौटते समय मिठाई बाँटती थी यह देखकर कि अब लड़कियाँ पढाई से ऊब गई हैं, वे उन्हें खेलने देती थी। उन्हें खुश रखने की कोशिश करती थीं। इस कारण लड़कियों को उनके प्रति बहुत लगाव हो गया। सावित्रीबाई के पास केवल दो ही बातें थी एक वात्सल्य ओर दूसरा लड़कियों की भलाई की अपार इच्छाशक्ति। अपने हंसमुख और खुशमिजाज के कारण वह सभी का दिल जीत लेती थीं।

बच्चों के लिए सबसे ज्यादा जरूरी होता है प्यार और आनंद। दोनों चीजें उन्हे सावित्रीबाई से भरपूर मिलती थीं। इसीलिए बच्चियाँ उनकी ओर खिंची चली जाती थी। लड़कियों के पाठशाला में आने के बाद सावित्रीबाई सबसे अधिक महत्व इस बात को देती थीं कि लड़कियों को सर्वांगीण मानसिक विकास के लिए ज्यादा से ज्यादा प्रयास किए जाएं। कभी कोई लड़की यदि पाठशाला में नहीं आई तो वे इसका पता लगाती कि वह क्यों नहीं आई। उसके बीमार होने पर मिलने के लिए उसके घर जातीं और दवा का इंतजाम करतीं। केवल इतना ही नहीं वह तो पाठशाला को यथाशक्ति आर्थिक सहायता भी देतीं। इस प्रकार उनमें समाज कल्याण और उसमें आमूलचूल क्रान्तिकारी बदलाव की दृष्टि थी। इसी कारण लोगों के मन में उनके प्रति अपार आदर था। एक महान

शिक्षिका के रुप में उनकी ख्याति बढ़ने लगी। धीरे-धीरे लोग खुद-ब-खुद अपनी लड़कियों को पाठशाला भेजने लगे। इस प्रकार वर्ष के अंत तक पाठशाला में शिक्षा पाने वाली लड़कियों की संख्या पच्चीस तक हुई जिनमें से दस ब्राह्मण, छह मराठा, दो चमार, दो महार, एक मांतग, एक गडरिया, एक जुलाहा, एक साली और एक माली जाति की लड़कियां थीं।

पाठशाला में आने वाली लड़कियों की संख्या का जाति के आधार पर प्रतिशत निकालें तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इस स्त्री शिक्षा का अधिकतम उपयोग पुणे के शनिवार पेठ, बुधवार पेठ और सदाशिव पेठ नामक बस्तियों में रहने वाले ब्राह्मण परिवारों की लडकियों ने ही अधिक किया। सन् 1849-50 में पाठशाला में दाखिल लड़कियों की संख्या सत्तर तक बढ़ गई। इस कारण दो शिक्षकों की नियुक्ति भी करनी पड़ी। श्री आर. डी. कुलकर्णी सवेतन शिक्षक तथा श्री विष्णुपंत थत्ते अवैतनिक शिक्षक के रूप में कार्य करते थे।

ज्योतिराव फुले ने 1848 से 1851 के बीच पुणे और अन्य कई देहातों में लड़कियों की अनेक शालाएँ स्थापित की। पुणे के बुधवार पेठ नामक बस्ती में दिनांक 3 जुलाई 1851 के दिन श्री अन्नासाहब चिपलुणकर के बाड़े में लड़कियों की एक पाठशाला प्रारंभ की। इस शाला में सावित्रीबाई का तबादला किया गया। साथ में एक शिक्षक और एक शिक्षिका भी थे। इस पाठशाला में शुरुआत में अड़तालीस लड़कियाँ थी। दिनांक 17 सितम्बर 1851 के दिन पुणे के ही रास्ता पेठ नामक इलाके में लड़कियों की एक नई पाठशाला प्रारंभ हुई। उसी प्रकार वेताल पेठ में 15 मार्च 1852 को एक और पाठशाला स्थापित की गई। इन्हीं पाठशालाओं के बारे में विस्तृत जानकारी 860-1852 एज्यूकेशन सी. डी. वाल्यूम-सात में उपलब्ध है। इस प्रकार जगह-जगह पर लड़कियों की पढ़ाई का मार्ग प्रशस्त करने के बाद म. ज्योतिराव फुले ने अस्पृश्य वर्ग के बच्चों के लिए वेताल पेठ में ही 1 मई 1852 के दिन एक पाठशाला प्रारंभ की। पूरे देश में अस्पृश्य वर्ग के लिए स्थापित की गई यह पहली पाठशाला थी। इस पाठशाला की मुख्याध्यापिका सावित्रीबाई ही बनी। इस पाठशाला के बारे में तत्कालीन 'पुणे ऑब्जर्वर' समाचार पत्र के 29 मई 1852 के अंक में निम्नलिखित जानकारी दी गई है :

'परोपकार की भावना से प्रेरित माली जाति के व्यक्ति ने अपने

खर्च से अस्पृश्य वर्ग के लिए एक पाठशाला स्थापित की है, यह जानकर भारत के सुधारवादी लोगों को बहुत खुशी होगी। यह पाठशाला वेताल पेठ में होने से यहाँ महार, मांग ओर पखारी जैसी जातियों के बच्चों को पढ़ाया जाता है।'

इस पाठशाला की स्थापना कर म. फुले ने अस्पृश्यता का कलंक धोकर सामाजिक समानता प्रस्थापित करने का संकल्प लिया। इस संबंध में विख्यात लेखक डॉ. मंगूलकर ने 'म. फुले आणि संशोधन' पुस्तक में कहा है कि 'भारतवर्ष के आधुनिक इतिहास में अस्पृश्य वर्ग के उत्थान के लिए किया गया यह पहला प्रयास है। उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले को भी इस लोकहित के सिवा और कोई विषय न भाता। अत्यंत प्रतिकूल स्थितियों में उन्होंने पुणे में स्त्रियों ओर अछूतों के लिए पाठशाला चलाई। त्याग और सेवा की वे आदर्श उदाहरण बन गई। इसीलिए उन्हें सार्वजनिक हित में एक शमा या दिए की लौ के समान अपना सम्पूर्ण जीवन ही समाप्त करने वाली एक पहली महिला कार्यकर्ता का सम्मान दिया जाना चाहिए।

सावित्रीबाई फुले का जीवन बहुत सादा था। वह स्वयं सूत कातती और जुलाहे से उसका कपड़ा बुनवा लेतीं। वे हमेशा खादी के कपड़े पहनती और अत्यंत सादे लिबास में विवाह आदि समारोहों में जाती थी। आमतौर पर लोगों में यही गलतफहमी है कि हमारे देश में खादी का इस्तेमाल 1920 के दौरान प्रारंभ हुआ। परंतु खादी का प्रचलन उससे काफी पहले से था। म. फुले और सावित्रीबाई स्वयं अपने हाथों से काते हुए सूत के कपड़े पहनते थे।

सावित्रीबाई ने म. ज्योतिराव फुले के मार्गदर्शन में स्त्रियों की स्थिति सुधारने के लिए महिला सेवा मंडल की स्थापना की थी। सम्पूर्ण भारत में छुआछूत मिटाने का काम करने वाली यह पहली संस्था थी। इस संस्था की ओर से 14 जनवरी 1852 के दिन तिलगुड़ समारोह आयोजित किया गया। (महाराष्ट्र में महिलाओं के बीच मकर संक्रांति के पर्व पर इस प्रकार संक्रांति मिलन' मनाने का पुराना रिवाज आज भी चला आ रहा है।) समारोह का आयोजन पत्रिका छपवा कर किया गया। पत्रिका का मजमून निम्न प्रकार था :

दिनांक 13.01.1852 के दिन पुणे के कलेक्टर साहब की पत्नी मिसेस जोन्स साहिबा की अध्यक्षता में सार्वजनिक तिलगुड़ समारोह

सम्पन्न होने वाला है। अत: सभी महिलाएँ अपनी बहु-बेटियों के साथ अवश्य उपस्थित हों। समारोह सायं 5 बजे है। जिस भी जाति या धर्म की महिलाएँ आएंगी उन्हें एक ही समान आसन पर विराजमान किया जाएगा। किसी प्रकार का जाति भेद या पक्षपात किए बिना सभी को समान मानकर हल्दी कुमकुम लगाया जाएगा और तिलगुड़ बाँटा जाएगा।

सौ सावित्रीबाई भ्रतार ज्योतिराव फुले
सेक्रेटरी, महिला सेवा मंडल

इस समारोह में एक बोरा तिल और गुड़ की दो भेली मिलाकर तिलगुड़ बाँटा गया। इसका कुल खर्च 90 रु. 12 आने और 3 पाई हुआ था। समारोह में हजारों विवाहितें आयीं थीं। सगुणाबाई क्षीर सागर, सौ. सरस्वतीबाई भ्र. सदाशिव राव बहादुर गोवंडे, सौ. अवस्कासाहेब भ्र. गणेश जोशी, सौ. उमा बाई, भ्र. सिद्धेश्वर शास्त्री, सौ. इणमंती बाई उय्यावारु, सौ. सावित्रीबाई भ्र. अण्णा रोडे, सौ. राधाबाई नारायण राव (जे. पी.) लोखंडे, इत्यादि महिलाओं ने इस आयोजन को अपने घर का काम मानकर समारोह की सफलता के लिए बहुत परिश्रम किया और उसे सफल बनाया। इस समारोह के लिए अपना योगदान देने वाली महिलाओं की सूची बहुत बड़ी होगी जो कि सावित्रीबाई की लोकप्रियता की परिचायक है।

म. ज्योतिराव जी से प्रेरित अस्पृश्य वर्ग की पाठशालाओं की प्रमुख होने के नाते सावित्रीबाई सारी पाठशालाओं की देख-रेख करती थीं। प्रत्येक पाठशालाओं के स्थापना दिवस, वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह उनके नेतृत्व में होता था। इसके अलावा वह शिवाजी जयंती इत्यादि समारोह आयोजित करती थीं। दिनांक 12 फरवरी 1853 को सभी पाठशालाओं का एक ही सम्मिलित पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित किया गया। इसकी जानकारी ज्ञानोदय समाचार पत्र में प्रकाशित हुई थी। पेशवाओं की सल्तनत अस्त होने के बाद पुणे में किसी सुप्रसिद्ध पुणे निवासी और यूरोपियन के किसी सामाजिक प्रयास को प्रोत्साहित करने हेतु सम्मिलित होने या एकत्रित होने का यह पहला ही उदाहरण था। इसलिए उस घटना की उस समय बहुत प्रशंसा की गई। इस अवसर पर

श्रोताओं की तथा दर्शकों की जितनी भीड़ हुई उतनी पहले कभी नहीं हुई थी। यह समारोह पूना कॉलेज के परिसर में हुआ था।

समारोह का नजारा उत्साहपूर्ण और मनोरंजक था। चौक में लोगों के बैठने के लिए बिछायत डाली गई थी। कुर्सियाँ और कोच भी लगाए गए थे। पुणे के तत्कालीन ऊँचे ओहदों पर कार्यरत हिंदु और यूरोपियन प्रतिष्ठित नागरिकों से सभा स्थल भर गया था। चौक के एक ओर की गैलरी में विभिन्न पाठशालाओं की लड़कियाँ और दूसरी ओर कॉलेज के विद्यार्थी बैठे थे। उसके बाजू की खिड़कियों से लोग झांक कर देख रहे थे। पूरे चौक परिसर में लगभग दो हजार लोग थे और विश्राम बाग बाड़े के चारों ओर हजारों लोग जमा थे। इससे पहले इतना बड़ा जन सागर एक स्थान पर कभी एकत्रित नहीं हुआ था।

यूरोपियन मेहमानों में निम्नलिखित स्त्री-पुरुषों की उपस्थिति उल्लेखनीय रही : ब्रिगेडियर टायडेल, मिसेस टायडेल, मिसेस काकवर्न, इ. सी. जोन्स, मिसेस शवेल, मेजर कॅन्डी, कॅप्टन कोर्स, डॉ. गिलँडर्स, मिस ब्राउन, मिस हॅन कॉक, कैप्टन विलो स्त्री, लेफ्टिनेंट बॅनरमन, रेवरंड जे. मिचेल, मिसेस मिचेल, रेवरंड जी. एल. फेटेन, मिसेस फेटेन, खेरंड डब्ल्यू. के. मिचेल फ्रेजर, मिसेस फ्रेजर, आर. टी. पिम्हे, इ.एस. ए. बोसनेट, इ. एस. प्रोफेसर मॅकडमल।

उपस्थित भारतीय सज्जनों मे सरदार अप्पा साहेब ढमढेरे, सरदार बालासाहेब मजुमदार, सरदार बालासाहेब मेहेन्द्रके, सरदार पुरुषोत्तम बिनी-वाले, सरदार दाजीभाऊ पान-से, सरदार बालासाहेब पटवर्धन, सरदार राव साहेब खाजगी वाले, सरदार कृष्णजीपंत पुकशी बाग वाले, विनायक वासुदेव (डे. कलेक्टर) अण्णा साहेब चिपलुणकर, प्रोफेसर विष्णु शक्ति चिकुणकर, प्रोफेसर केरो लक्ष्मण छत्रे, उमीन साहेब आर्देसर करसेट जी (मन्सफ) और बड़ोदा के भाऊ साहेब शास्त्री आदि उल्लेखनीय थे।

समारोह के प्रांरभ में सर्वप्रथम म. फले ने पाठशालाओं की ओर से सभी का स्वागत किया। सावित्रीबाई ने समारोह का उद्देश्य स्पष्ट किया। बाद में श्री बापू-राव जी मांडे ने पाठशालाओं का रिपोर्ट पढ़ी (अंग्रेजी में) उसके बाद पाठशालाओं के व्यवस्थापक श्री अण्णा साहेब चिपलुणकर जी का भाषण हआ। अन्त में मिसेस जोन्स का भाषण हुआ जिसमें बाई फुले दम्पति की भूरि-भूरि प्रशंसा की। समारोह की अध्यक्षता मेजर कँडी ने की थी।

हाजिरजवाब सावित्रीबाई

सावित्रीबाई फुले के बारे में अनेक किवदंतियां प्रसिद्ध हैं। 'मजदूर' नामक पत्र के संपादक स्व. श्री रा. ना. लाड द्वारा दी गई। 'शेतकरी हिंदुस्तान' के दि. 1 मार्च, 1851 के अंक में प्रकाशित निम्नलिखित किंवदंती है :

'दीवाली की समाप्ति के कुछ ही दिनों के बाद की बात है। म. फूले के यहाँ सामाजिक कार्य के लिए उनके मित्रों की एक बैठक हुई थी। इस बैठक में राव बहादुर सदाशिव बल्लाल गोवंडे, मोरों विट्ठ वालकेकर, गणपत-राव वासुदेव जोशी (सार्वजनिक काका) बाबा-जी मना-जी ठेगले इत्यादि सात-आठ मित्रों की मंडली जमी थी। बैठक समाप्त होने पर गपशप चलने लगी उसी समय सावित्रीबाई ने नाश्ता तैयार कर टेबल पर रख दिया। सभी मित्र मेज को घेरकर कुर्सियों पर बैठे थे। हर एक ने अपनी-अपनी पसंद की चीज उठाकर इस प्रकार खाना शुरू किया जैसे वह कोई दुर्लभ वस्तु हो। ज्योतिराव जी ने एक गुजिया उठाकर मुँह में डाली। तभी सार्वजनिक काका लड्डू का टुकडा फाँकते हुए बोले—'अरे भाभी, आपका तो महार-मांग जमात के बीच अच्छा खासा बोलबाला हो गया है।

उनकी आप पर गाढ़ी श्रद्धा हो गई है। आप बच्चों को बहुत अच्छा पढ़ाती हैं। सभी लोग आपकी तारीफ करते हैं। मैं स्वयं भी आपका प्रशंसक हूँ।'

काका के मुँह से यह प्रशंसा सावित्रीबाई को पसंद नहीं आयी। कुछ नाराजी के साथ ही वे बोलीं—'मैं भला क्या पढाती हूँ बच्चों को, यह सारी मेहनत इनकी ही (ज्योतिराव की) है। मैं तो बस इनकी अनुयायी हूँ। ये जैसा बताते हैं वैसा ही मैं करती हूँ।'

'फिर भी आपका कार्य प्रशंसा के योग्य है।'

'अजी, मेरा काहे का काम? मैं तो बस इन्हीं की राह पर चल रही हूं। कार्य तो इनका है। मैं जो कुछ करती हूँ वह सब इन्हीं की प्रेरणा से करती हूं। ये किसी मूढ़ से मूढ़ को भी सिखा दें तो वह भी मेरी तरह काम कर लेगी' प्रशंसा से अपने पति की ओर देखते हुए उन्होंने कहा।

काका ने उनकी बात को अन्यथा मानकर उस पर बेहूदा मजाक किया—'क्या कहती हो भाभी, आप अनपढ़ और गंवार हो क्या?' उनकी इस तरह की बातें सुनकर सभी स्तंभित हो गए। सभी को लगा अब सावित्रीबाई नाराज होगी। सभी उनकी ओर सहमे से देखने लगे। किन्तु वैसा कुछ नहीं हुआ। काका पर नाराज होने की बजाय सावित्रीबाई शांत संयत ढंग से बोली—'मैं तो अनपढ़ गंवार थी, परन्तु ज्योतिबा फुले ने ही मुझे शिक्षा देकर ज्ञान का प्रकाश दिया।' सावित्रीबाई का यह जवाब सुनकर सार्वजनिक काका ठिठके से रह गये। सभी को आश्चर्य लगा। महात्मा ज्योतिराव फुले तो अपनी धर्मपत्नी सावित्रीबाई की ओर बडे आश्चर्य और गर्व से देखते रहे।

इस किंवदंती से सावित्रीबाई की सविनय विनम्रता और समय सूचकता के गुणों का परिचय होता है। इसमें दो राय नहीं कि म. फुले ने बहुत बड़ा लोकहित का काम किया किन्तु यह भी उतना ही निश्चित रुप से स्वीकार करना होगा कि समाज में उनके काम को सार्थक बनाने में और उनका नाम अमर करने में सावित्रीबाई का योगदान भी उतना ही अविस्मरणीय है। इस वास्तविकता के अलावा यह भी विचारणीय है कि सावित्रीबाई की प्रवृत्ति मूलतः ज्ञानार्जन की थी और उनकी ग्रहण शक्ति बहुत तेज थी इसलिए तेजतर्रार होने के कारण हर एक सीख को आत्मसात करने में वे उतनी ही तत्पर रहतीं। म. फुले ने उन्हें मराठी के अलावा अंग्रेजी लिखना, पढ़ना व बोलना सिखाया। सावित्रीबाई पर

सौंपी गई हर जिम्मेदारी सावित्रीबाई ने तन्मयता से सफलतापूर्वक पूरी की।

म. फुले द्वारा स्थापित की हुई सभी पाठशालाओं को मूर्तरूप देने में सावित्रीबाई का सहयोग बेमिसाल है। मिशनरी महिलाओं की ही तरह किसानों और अछूतों की प्रत्येक झुग्गी-झोपड़ी में जा-जा कर बच्चों और बूढ़ों को पढ़ाने का आग्रह कर उन्होंने लोगों के बीच शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया। वे दृढ़ निश्चयी थीं। उनमें कुछ कर गुजरने की जिद थी। महिलाओं की हितैषी के रूप में वे जानी जाती थीं। दलित समाज में तो एक महान महिला के रुप में उन्हें बहुत आदर मिलता था।

पति के अधिकांश अभियानों की जिम्मेदारी उन्होंने अपने कंधों पर उठा ली थी। समाज सेवा का यह व्रत निभाते हुए सावित्रीबाई और म. ज्योतिराव को कितनी कठिनाइयों और तकलीफों का सामना करना पड़ा होगा इस बात की कल्पना करना कठिन है। इस असाधारण दम्पति के कार्यों को देखने पर समझ में नहीं आता कि पति के विशाल समाजकार्य के बारे में आश्चर्यचकित होकर देखें या पत्नी की अपरिमित जीवटता और निष्ठा को देखकर अवाक रह जाएँ।

पति की सच्ची जीवन संगिनी

सावित्रीबाई फुले के बारे में कुछ घटनाएं पढ़ने को मिलती हैं। अनेक ब्राह्मण घरों की महिलाएँ भी उनकी सहेलियाँ थीं। राव बहादुर सदाशिवपंत गोवंडे जी की पत्नी सरस्वती बाई और सावित्रीबाई फुले एक बार एक विवाह समारोह में महार जमात के अछूत बस्ती में गई। वहाँ उनका स्वागत हुआ। विवाह समारोह बड़े धूमधाम से हुआ। दोनों महिलाओं ने वर-वधु को आशीर्वाद और उपहार दिए और जब वे दोनों घर लौटने लगीं तो दुल्हा-दुल्हन के माता-पिता उन्हें भोजन किए बिना आने नहीं दे रहे थे। अंतत: भोजन और स्वागत के बाद ही उन्हें छुट्टी मिली। लौटते समय काफी रात हो गई थी। दोनों के बीच राह चलते यह बातचीत होने लगी :

सावित्रीबाई—बहुत देर हो गई है न?

सरस्वती बाई—हाँ सचमुच !

सावित्रीबाई—अब वो बहुत नाराज होंगे।

सरस्वती बाई—सो क्यों भला? उन्होंने ही तो हमें जाने को कहा था।

सावित्रीबाई—वो तो सही है, पर देर भी तो बहुत हो गई

है हमें।

सरस्वती बाई—तो फिर अब क्या किया जाए?

सावित्रीबाई—अब आप मुझे मेरे घर तक छोडने मेरे साथ चलिए।

इस तरह बोलते-बोलते वे दोनों बाड़े के द्वार तक पहुंची। सावित्रीबाई ने द्वार से ही नौकर को आवाज दी। द्वार अंदर से बंद था। ज्योतिराव भीतर बैठे कुछ लिख रहे थे। पत्नी की आवाज सुनकर उनकी एकाग्रता भंग हुई। वे नाराज होकर कुर्सी से उठे और द्वार खोल कर बोले—'यह कौन सी रीत है शादी-ब्याह में जाने की?' सावित्रीबाई ने लालटेन मंगाने के लिए फिर एक बार नौकर को पुकारा। ज्योतिराव आंगन से तेजी से कदमचाल करते हुए आ रहे थे। बोले—'लालटेन ही क्यों भला? इतनी साफ चाँदनी बिखरी पडी है। ये नजर नहीं आती! सावित्रीबाई ने पलभर सरस्वतीबाई की ओर देखा। सरस्वतीबाई ने आँखे मिचकायीं।

ज्योतिराव ने द्वार खोला तो देखते ही रह गए कि साथ में सरस्वतीबाई भी हैं फिर क्या था। असमंजस में पड़े ज्योतिराव दौड़कर भीतर से लालटेन ले आए। सरस्वतीबाई बोली—'शादी ब्याह में जाने की हमारी रीत गलत हो गई इसकी कुछ वजह भी होगी। किन्तु फिर भी आप को इतना नाराज तो नहीं होना चाहिए।'

ज्योतिराव सरस्वतीबाई को सफाई देने लगे—'नहीं, नहीं मैं कोई नाराज थोड़े ही हुआ। वह तो मेरी आवाज ही भारी भरकम है। आप क्या समझीं कि मैं नाराज हुआ? खैर वह सब छोड़िये। यूँ बाहर आंगन में क्यों खड़ी हैं। अंदर आ जाइये।'

सरस्वतीबाई ने कहा—'देखिये, अब बहुत रात हो रही है। वे घर पर मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। आपकी तरह वे भी मुझ पर नाराज होंगे। इसलिए अब आप ही चलिए मेरे साथ मुझे घर तक छोड़ने के लिए।'

ज्योतिराव सरस्वतीबाई को उनके घर तक छोड़ने के लिए उनके साथ गए। राव बहादुर अपनी पत्नी के इंतजार में दरवाजे में बैठे थे। ज्योतिराव को देखकर बोल पड़े—'अरे ज्योति! आप खुद चले आए इन्हें पहुँचाने, धोडिबा (नौकर) को ही भेज दिया होता।' इस पर ज्योतिराव ने उत्तर दिया, 'भाभी जी ही कह रही थी कि मझे ही आना होगा इनके साथ।' राव बहादुर पत्नी को

देखकर मुस्कराए। सरस्वतीबाई भी मुस्कुरा दी। किन्तु उनका संकेत यही था कि 'ज्योतिराव को देखकर कैसे चुप हो लिए।'

इससे यह स्पष्ट होता है कि आज से सौ वर्ष पूर्व की नारी अपने पति से उतना ही डरती थी जितना कि आज की नारी। सावित्रीबाई फुले जो अपने पति के साथ कंधे से कंधा मिलाकर शिक्षा के क्षेत्र में समाज परिवर्तन के लिए काम कर रही थीं, उन्हें भी कभी कभार अपने पति की झिड़कियां सुनने को मिलती थीं, पर वे इतनी चतुर थीं कि समय व वातावरण देखकर प्रसंग बदलकर ज्योतिराव की गलती का उन्हें अहसास करा देती थी। हालांकि अनेकों लोग यही सोचते होंगे कि पति से प्राप्त शिक्षा, प्यार और समतापूर्ण व्यवहार ही सावित्रीबाई की पतिभक्ति का कारण होंगे किन्तु यह सच नहीं है। बल्कि वे स्वयं समाज परिवर्तन और शिक्षा के क्षेत्र में खुद डूब गईं। भारतीय परिवेश में सावित्रीबाई फुले का चरित्र एक अनूठा आदर्श है।

ज्ञान की खान–सावित्रीबाई

महात्मा फुले के असामान्य त्याग, उनके उज्जवल चरित्र, धर्म संबंधी उदार मतवादी अवधारणाएँ, दलित वर्ग के प्रति उनका अपनत्व, महिलाओं की उन्नति की उनकी हार्दिक इच्छा व प्रयास, श्रोताओं को प्रभावित करने वाली उनकी वाणी और उसी प्रकार पत्नी के प्रति असीम प्यार इत्यादि बातों का एक व्यापक और गहन प्रभाव सावित्रीबाई के व्यक्तित्व पर पड़ा था। जिसके कारण वे हृदय से पूर्णतया पति की अनुगामी रहीं। पति ही उनके सर्वस्व थे। उनके सान्निध्य के परिणाम स्वरुप पति के जीवन का ध्येय उनकी आराधना बन गया। उन्होंने अपने पति का सारा तत्वज्ञान और सारी साधना आत्मसात् कर ली। पति के जीवन के साथ अपने जीवन को एकरूप कर लिया। इस प्रकार वे म. ज्योतिराव फुले के जीवन का अभिन्न अंग बन कर सही अर्थों मे उनकी अर्धांगिनी और सच्ची जीवन साथी कहलायीं।

म. ज्योतिराव को अपनी जीवनसाथी की विद्वता व बुद्धिमता के बारे में बहुत गर्व था। सावित्रीबाई वास्तव में ऐसे गर्व की पात्र थीं। उनमें बुद्धि चातुर्य का अद्वितीय गुण था। किसी भी विषय का गहन अध्ययन कर उसे आत्मसात करना

और उसमें प्रवीण हो लेना उनकी विशेषता थी। दूसरी ओर वे घर गृहस्थी के कामकाज कुशलता पूर्वक सम्भालने में भी निपुण थीं। उस जमाने में विभिन्न प्रकार के पकवान बनाने में उन जैसी गृहिणियाँ पुणे में बहुत ही कम थीं। ज्ञान जिज्ञासा के कारण ही अंग्रेजी भाषा पर अधिकार हासिल करने की अपनी महत्वकांक्षा पूरी करने हेतु उन्होंने उसे अपनी मातृभाषा जैसे ही सीखा। कई अंग्रेजी पुस्तकें पढ़ी। ज्योतिराव ने लड़कियों की पाठशाला प्रारंभ की जिससे ब्रिटिश सरकार ने भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने अतिशूद्र घरों के बच्चों को पढ़ाने के लिए भी कई पाठशालाएँ स्थापित की। इस कार्य में उन्हें सहयोग देने वाले अनेकों यूरोपियन व्यक्तियों में से एक थे रेवेन्यू कमिश्नर रीवज साहेब। अपना कारोबार सम्भाल कर वे अतिशूद्रों की पाठशालाओं का अचानक निरीक्षण करते और बच्चों की तरक्की की जानकारी हासिल करते। इसी प्रकार वे एक बार एक पाठशाला में पहुँचे जहाँ सावित्रीबाई पढ़ा रही थीं। पाठशाला में अभ्यास चल रहा था सावित्रीबाई बड़ी तन्मय होकर पढ़ा रही थीं। वे बच्चों को शिवाजी महाराज और शिवाजी के पिता (शाहजी महाराज) की वीरता की कहानियाँ सुना रही थीं। तथा लड़कियों से प्रश्न पूछकर उत्तर पा रही थी। सारी कक्षा ही पढ़ाई में इतनी एकाग्र हो गई थी कि रीवज साहब के आने की किसी को आहट तक न हुई। साहब बड़े कौतुक और ध्यान से दरवाजे में खड़े-खड़े सब देख रहे थे। पाठ समाप्त होने के समय एक लड़की का ध्यान उनकी ओर जाने पर उसने इशारे से सभी को बताया। सभी लड़कियों ने शांत और अनुशासित ढंग से खड़े होकर साहब का स्वागत किया। साहब को यह देखकर बहुत आनंद हुआ। उन्होंने सावित्रीबाई की अंग्रेजी में प्रशंसा की। सावित्रीबाई ने भी अंग्रेजी में ही उनके प्रति आभार व्यक्त कर उनका स्वागत किया और वे साहब के साथ धाराप्रवाह अंग्रेजी में वार्तालाप करने लगी। यह देख कर साहब को बहुत ही आश्चर्य हुआ। उसी समय अचानक म. जोतीराव वहाँ पहुचे। गद्‌गद हृदय से रीवज साहब जोतीराव फुले को कहने लगे 'जोतीराव आप बहुत ही भाग्यशाली हैं जो आपको ऐसी विदुषी और ज्ञानवान पत्नी का साथ मिला।'

सावित्रीबाई की लोकप्रियता जिस तरह दलित समाज में तेजी से बढ़ रही थी, उसी प्रकार मराठा समाज के लोग भी सावित्रीबाई के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उन्हें हर तरह का सक्रिय सहयोग दे रहे थे। किन्तु उनके करीबी रिश्तेदारों

ने उनके प्रति रूखा व्यवहार रखकर उनकी कोई मदद नहीं की। बल्कि इसके उल्टे कई रिश्तेदार तो ये फब्तियाँ कसते थे कि 'सावित्री को भिखारीपन की लत लगी है।' उन्हें यह समाज सेवा का कार्य बेहूदा लगता था। ठीक ही तो है, 'घर के कामकाज करते समय दो-चार सहेलियाँ इकट्ठा होने पर एक दूसरे को भला बुरा कहने का महान समाज कार्य छोड़कर सावित्रीबाई यदि लोकशिक्षा जैसे ऐरे-गैरे शौक पालती हो तो वह भला किसे भाता? औरतों को तो बस चूल्हा-चौका सम्भालना चाहिए और बच्चों का लालन-पालन करना चाहिए। इतना करने के बाद चार सहेलियों की चौकड़ी जमा कर इधर-उधर की गपशप करनी चाहिए। बहुत ही हुआ तो बड़े नाज-नखरों के साथ जवाहरात आभूषणों से सज-सँवर कर शादी ब्याह में इठलाते हुए मटक-मटक कर अपने सौन्दर्य का प्रदर्शन करना चाहिए। उन लोगों के लिए यही स्त्री का व्यक्तित्व था। यह सब प्रतिष्ठित तौर-तरीके छोड़कर समाज सेवा जैसे फालतू कामों में अपना समय व सेवा जाया करने में भला क्या अर्थ है, इसी नजरिए से सावित्रीबाई की ओर उनके रिश्तेदार देखा करते थे।

सावित्रीबाई फूले ने स्त्री शिक्षा और समाज कल्याण का बीड़ा उठाया। यह सभी कार्य निश्चय ही नेक और अच्छे काम थे। इसलिए कई लोग उनके इन कार्यों का प्रसंग विशेष करते ओर उन्हें इस काम में प्रोत्साहित करते थे। ज्योतिराव पत्नी की योग्यता के प्रति आश्वस्त थे। सावित्रीबाई के हाथों समाज के हित के जो भी कार्य होते थे उनके बारे में वे सावित्रीबाई का सम्मान करते थे। सावित्रीबाई की बुद्धिमत्ता और मेहनत अपने समाज के लिए जिस तरह उपयोग संभव होता, उस तरह से मार्ग खोज निकालने के प्रति म. ज्योतिराव मार्ग खोज निकालने में प्रयत्नशील रहते। इसी प्रकार के प्रयासों में उन्हें जीवन का संतोष होता।

सावित्रीबाई ने महिला शिक्षा के संबंध में जो कार्य किए उनका श्रेय महात्मा ज्योतिराव फुले को भी दिया जाना चाहिए। लोग-बाग सावित्रीबाई की प्रशंसा करते। उससे वे कभी घमन्डी नहीं हुई। किन्तु सावित्रीबाई का कार्य देखकर महात्मा ज्योतिराव के हृदय को जो गर्व प्राप्त होता उसे देखकर ही सावित्रीबाई को बहुत संतोष मिलता।

धीरज का हिमालय

सावित्रीबाई अत्यंत निडर और धैर्यवान थीं। वे बहत दृढ निश्चयी थीं। उन्होंने अपनी बहनों और दलित वर्ग के दु:ख निवारण के लिए प्रयास किए। उनकी शिक्षा के लिए बहुत कष्ट उठाए व इस जटिल कार्य हेतु अपना जीवन समर्पित कर दिया। इस व्रत के लिए उन्हें थोड़ी बहुत नहीं बल्कि अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। राह में अनेक रुकावटें आई। अनेकों संकट झेलने पड़े। फिर भी सावित्रीबाई अपने दृढ़ निश्चय से जरा भी विचलित नहीं हुईं और उन्होंने अपने सकंल्प को अधूरा नहीं छोड़ा। आने वाले हर संकट का उन्होंने बड़े धैर्य के साथ सामना किया।

एक बार एक आदमी गाली गलौज करते हुए पाठशाला में आया। उसकी गालियाँ सुनते ही सावित्रीबाई पाठशाला के प्रवेश द्वार पर आकर खड़ी हो गई। फिर भी उसका गाली देना रूका नहीं। सावित्रीबाई ने उसे शांत संयत ढंग से पूछा—'इतना नाराज क्यों हो रहे हो? वह आदमी गुर्राता हुआ बोला—'कहाँ गया वह यमदूत जिसने मेरे लड़के को मारा। मैं अब उसे अच्छी तरह गुनकता हूँ। बाई जी, आप बाजू में हट जाओ वर्ना आपको ढकेलकर मैं पाठशाला में घुसुँगा।?' वह आदमी हाथापाई करने

के इरादे से बोला। कक्षा में बैठे विद्यार्थी सहम गए। सावित्रीबाई ने उसे समझाने की बहुत कोशिश की। किन्तु वह उन्हें अनसुना कर पाठशाला की सीढ़िया चढ़ने लगा। उसके तेवर देखकर अंत में सावित्रीबाई दोनों हाथों से उसका रास्ता रोककर कक्षा के दरवाजे पर खड़ी हो गई। वह आदमी उनके सामने आकर खड़ा हो गया, सावित्रीबाई को लगा कि अब वह चुप होकर लौट जाएगा। लेकिन वह और भी खौल उठा। सावित्रीबाई ने उसे समझाया छोटे बच्चे हैं। पलभर में झगड़ते हैं तो दूसरे ही पल फिर से खेलने लगते हैं। बच्चों के झगड़ो में बड़ों को नहीं पड़ना चाहिए। आप यदि आज महदू को मारेंगे तो कल उसका बाप आकर आपके बेटे को मारेगा। ऐसी बातें मैं यहाँ नहीं चलने दूँगी। चले जाइये यहीं से।' सावित्रीबाई की डपट सुनकर वह आदमी लौट गया। दूसरे दिन वह फिर से पाठशाला में आया और पिछले दिन के अपने बर्ताव के प्रति लज्जित होकर उसने सावित्रीबाई से माफी माँगी।

सावित्रीबाई को किसी भी बात से डर नहीं लगता था। किन्तु जिस रास्ते से वे पाठशाला जातीं और लौटती थीं उस राह के दोनों ओर सभ्य लोगों के घर थे। फिर भी वहाँ गुजरते समय उन्हें लोगों की जली-कटी और कई तरह की बेहूदी बातें सुननी पड़ती थीं। आज भी पुणे के कुछ हिस्सों में राह चलती महिलाओं को असभ्य लोगों की अश्लील बातें सुननी पड़ती हैं। ऐसी बस्ती को आज गुंडो की बस्ती कहते हैं। किन्तु डेढ़ सौ वर्ष पहले सभ्य बस्तियों में सावित्रीबाई को गालीगलौज, ऊल-जलूल बकवास, गोबर फेंककर मारना, पान का पीक मारना इत्यादि घिनौने बर्ताव का सामना करना पडा। एक दिन एक गुंडा उनके आगे आकर उन्हें धमकाने लगा, 'महिलाओं और अछूतों को पढ़ाया तो खबरदार' यह सुनकर सावित्रीबाई जैसी निडर महिला भी सहम गईं। धीरे-धीरे तमाशाइयों की भीड़ जुटने लगी। उनमें से कुछ लोग उस आदमी का साथ देने लगे। सावित्रीबाई पलभर के लिए चुप होकर खड़ी रहीं पर तुरंत उन्होंने पलक झपकते ही उस गुंडे को दो तमाचे रसीद कर दिए और कहा—'मैं मालन हूँ, समझे!' इन अप्रत्याशित तमाचों से वह आदमी एक ओर जा गिरा और तमाशाई बगलें झांकते हुए चलते बने। फिर वह आदमी भी उठकर धीरे से चुपचाप चलता बना। इस प्रकार राह से आते जाते सावित्रीबाई को होने वाली तकलीफें हमेशा के लिए दूर हो गईं। अंत में उनके सामाजिक शिक्षा के रास्ते खुल गये।

दयालु सावित्रीबाई

सन् 1876-77 में महाराष्ट्र में भारी अकाल पड़ा था। पेड़ों पर पत्तियाँ न रहीं, जमीन पर सूखी घास का तिनका तक न रहा। लाखों लोग अन्न-जल के बिना मर गए। लाखों जानवर चारा-पानी बिना मरे। हर तरफ भूख-प्यास से तड़प-तड़प कर मरे लोगों को गिद्द-चीलें खा रही थीं। क्योंकि उनके अंतिम संस्कार हेतु पुलिस को आदमी नहीं मिलते थे। इस प्रकोप का विस्तृत वर्णन 'फैमिन कमीशन' की रपट में देखा जा सकता है।

आदमी-आदमी से दूर हो गया था। स्त्रियाँ-बच्चे भी तड़प कर मर रहे थे। यह विनाश लीला सामाजिक कार्यकर्ताओं से भी देखी न जाती थी। म. फुले, गणपतराव जोशी, राव बहादुर लोखंडे, राव बहादुर गोवंडे, रा. ब. देश-मुख, इत्यादि बहुजन समाज के हितैषियों ने और कई नेताओं ने पत्र लिखकर और टेलिग्राम के द्वारा सरकार का ध्यान इस ओर खींचा। सरकार ने अकाल की विपदा से निपटने के लिए विभिन्न काम किए। 'डेक्कन एग्रिकल्चर रिलीफ ऐक्ट' जैसे कानून लागू किए।

म. फुले ने इस संकट की घड़ी में श्री रामाजी पंत की

ही तरह जगह-जगह भोजन केन्द्रों की स्थापना की। अन्नदान व गरीबों की रक्षा की मुहिम चलाई। कुछ लोगों के पास बकाया अनाज था। उन्होंने ज्योतिराव के छात्रावास को कई बोरे अनाज दिया। इतिहास में इस प्रकार का एक उदाहरण संत तुकाराम का मिलता है। उन्होंने अपने घर में कुछ भी अनाज न रख कर अपने खेत में उगा हुआ सारा अनाज गरीबों को बाँट दिया। इस कार्य में सावित्रीबाई ने उन्हें बराबरी का सहयोग दिया। इन छात्रावासों में बारह वर्ष तक की उम्र के बच्चों के लिए सुबह-शाम नि:शुल्क भोजन की व्यवस्था थी। विभिन्न छात्रालयों के कुल दो हजार विद्यार्थी भोजन करते थे। पूरे महाराष्ट्र में सत्यशोधक समाज की ओर से चलाये गए इन सारे छात्रालयों का कारोबार सावित्रीबाई स्वयं देखती थीं। महाराष्ट्र की कई करोड़ जनता में से इस कार्य से जीवन दान पाने वालों की संख्या भले ही नगण्य हो फिर भी यह तो निर्विवाद सत्य है कि उसमें से सावित्रीबाई का विशाल हृदय, दिलदार प्रवृत्ति और जनहित के लिए सर्वस्व समर्पण की भावना के गुणों की कीमत बहुत बड़ी थी।

बिल्कुल उसी तरह जिस तरह संत शिरोमणि तुकाराम महाराज द्वारा अपनी उपज के अनाज के दान का हिसाब तो किसी ने नहीं किया। किन्तु यदि कोई गणितज्ञ वह कर भी ले तो भी उनके दिलदार, उदार और दयाशील स्वभाव की व्याप्ति आँक पाना असभव है क्योंकि उनके उपयुक्त गुण तो 'अनंत' से भी व्यापक थे। उन्हें आंक पाना भला किसी के बस की बात कैसे हो सकती है। उसी प्रकार सावित्रीबाई फुले के त्याग को भला कोई कैसे आँक सकता है। सावित्रीबाई ने रोजाना कितनी रोटियाँ जमा की, कितना अनाज जमा किया, उसे किस तरह बाँटा, उससे कितने बच्चे, स्त्रियां-पुरुष जीवन दान पा सके इसका आंकड़ों में हिसाब एक बारगी तो कोई निकाल भी ले किन्तु जिस भीषण अकाल में असंख्य लोग भूख-प्यास से मर रहे थे, उस समय सावित्रीबाई जैसी एक महिला ने उनके जीवन रक्षा हेतु जो धैर्य व साहस का परिचय दिया उसका मूल्यांकन करना बहुत ही कठिन है। उस त्यागी की कीमत आँकना संभव नहीं। आज भी वैसा करना किसी के बस की बात नहीं है। इसलिए उनके प्रति यही कहा जा सकता है कि सावित्रीबाई का व्यक्तित्व बड़ा ही महान था तथा उनके दिल में समाज के प्रति मां सी ममता थी।

बाल हत्या प्रतिबंधक गृह

सावित्रीबाई के चरित्र का सार उनके प्रत्यक्ष रूप में कार्य में था। उनकी हर एक कृति अत्यंत परोपकारी और मानवतावादी होती थी। उनके चरित्र की यही सबसे बड़ी विशेषता थी। उन्होंने जनहित के अनेक कार्य किए। सच्चे कार्यकर्ता समाज में वैचारिक क्रांति करते हैं। स्वयं अपने चरित्र में आचरण के बिना लोगों के मन पर कार्यकर्ता चरित्र का प्रभाव नहीं पड़ता। उदार विचार व्यक्त करना सरल होता है, परंतु उन पर अमल करना कहीं अधिक कठिन होता है। फिर भी जो कार्यकर्ता अपने विचारों के अनुसार कार्य करते हैं, उन्हीं के चरित्र लोगों के लिए हमेशा अनुकरणीय बनते हैं। सावित्रीबाई का चरित्र इसी प्रकार का है।

डेढ़ सौ वर्ष पहले समाज परंपराओं और उनके अंधानुकरण जैसी रुढ़ियों से ग्रस्त था। इस कारण महिलाओं और दलितों को सबसे ज्यादा प्रताड़ित होना पड़ता था। उनका जीवन पशु से भी अधिक बदतर था। स्त्री युवावस्था में या बाल्यावस्था में ही विधवा हो गई तो उन्हें गुमराह कर अत्याचार का शिकार बनाया जाता था। मजबूर विधवा महिलाएँ अपनी

बदनामी से बचने के लिए गर्भपात करने की कोशिश करती थीं। यदि वह संभव न हुआ तो अनिच्छा से जन्मे बालक को क्रूर विवशता से गला घोंट कर मार डालती थीं। इस पाशविक अत्याचार पर प्रतिबंध लगाने के लिए कुछ उपाय करना जरूरी था। विधवा स्त्रियों के हाथों बाल हत्या न हो इस उद्देश्य से सावित्रीबाई के नेतृत्व व निगरानी में म. फुले ने 28 जनवरी 1853 को एक बालहत्या प्रतिबंधक गृह की स्थापना की। यह गृह अनेक विधवाओं का सुरक्षाघर सिद्ध हुआ। आज इसे 180 वर्ष हो गए हैं। यह गृह म. फुले ने अपने घर के पड़ोस में ही खोला था। इस कार्य के लिए उन्होंने एक भूखंड खरीद कर उस स्थान पर अस्पताल जैसा भवन खड़ा किया था।

इस स्थान पर ऐसी व्यवस्था की गई थी कि यदि अज्ञानवश किसी बाल विधवा को किसी अत्याचार का शिकार होने से गर्भाधान हो जाए तो वह उस अस्पताल में चुपचाप आकर अपनी प्रसूति कर ले और वह बच्चा वहीं छोड़ जाए। इस परोपकारी कार्य में म. फुले को लोकहितवादी गोपाल हरि देशमुख, राव बहादुर मदन, रा. ब. गोवंडे, श्री भांडारकर, श्री नवरंगे, श्री परमानंद और श्री तुकाराम तात्या पडवल इत्यादि सज्जनों ने अमूल्य सहयोग दिया। इस बार हत्या प्रतिबंधक गृह में सन 1873 तक लगभग 66 विधवा महिलाओं की प्रसूति हुई।

इस प्रसूतिगृह को महान समाज सुधारक श्री रानडे और श्री जडारकर ने भी बहुत सहायता की। इसकी सफलता से प्रेरित होकर उन्होंने पंढरपुर में भी ऐसे ही एक बालहत्या प्रतिबंधक गृह की स्थापना की। जिससे पुणे के गृह की आवश्यकता समाप्त प्राय होने से उसे बंद कर दिया गया। इस केन्द्र से युवा विधवा महिलाओं को बहुत आश्रय मिलता था। इस केन्द्र की पूरी जिम्मेदारी सावित्रीबाई ने संभाली। वे अत्याचार ग्रस्त विधवा महिला को उसकी ब्राह्मण या अन्य जाति का भेदभाव भूलकर समानता और स्नेह से बर्ताव करती थीं। जच्चा विधवा चाहें तो वहाँ रह भी सकती थीं। इस गृह में मिशनरी के अस्पताल से प्रशिक्षण प्राप्त चार दाईयां काम करती थीं। प्रसूति वाली विधवाओं और उनके बच्चों की सेवा सावित्रीबाई हृदय से करती थीं। उनके मानवतापूर्ण व्यवहार का यही सबसे बड़ा उदाहरण है। दयाभाव मानव धर्म का एक पहलू है। इसकी शिक्षा हमें सावित्रीबाई द्वारा किए गए महान कार्यों से मिलती है।

काशीबाई का पुत्र गोद लिया

सन् 1855 की बात है। सावित्रीबाई के बाल हत्या प्रतिबंधक गृह में काशी बाई नामक एक बाल-विधवा प्रसूति के लिए आयी थी। उसके केश काट दिये गये थे। वह कम उम्र की युवती थी और अत्यंत रूपवती थी। उसकी भूरी आँखें बहुत आकर्षक थीं। वह गिड़गिड़ाते हुए सावित्रीबाई को बोली—'मुझे इस संकट से बचाइये। मैं बहुत बीमार हूँ और इस संकट से उभर पाने की मुझे आशा नहीं लगती।' सावित्रीबाई ने उसे ढांढस बंधाया। दाइयों ने बड़ी कुशलता और परिश्रम से उसकी सफलतापूर्वक प्रसूति की। जच्चा-बच्चा सकुशल देखकर सावित्रीबाई को बहुत खुशी हुई। वे काशीबाई से मिलीं। उन्हें देखकर वह आदरपूर्वक नतमस्तक होकर बोली—'बाईसाहब आपके अनन्य उपकार हैं।' सावित्रीबाई उसे बोली 'खैर, वह रहने दे, लेकिन तुम्हारी प्रसूति सकुशल होने पर मैं ही तुझे बधाई देती हूँ' कहते हुए दिल खोल कर हँस पड़ीं। 'बाई साहेब, मैं बहुत ही पापी हूँ।' 'नहीं रे, तू तो नाम से ही काशी है और काशी नगरी जैसी ही पुण्यवती है। इसलिए तूने इस सलौने से बच्चे को जन्म दिया है।' सावित्रीबाई के ये वचन

सुनकर उसे बहुत तसल्ली हुई। उसने पूछा—'क्या मैं यह बच्चा आपके गृह में रखकर जा सकती हूँ?' सावित्रीबाई ने उसे इस बात की सहजता से इजाजत दे दी। यह देखकर काशीबाई फूट-फूट कर रोने लगी और अपनी राम कहानी सुनाने लगी—'लेकिन बाई साहेब मैं जाऊँ तो कहाँ जाऊँ? मुझे घर में कोई नहीं आने देगा। मेरा यह पाप सबको मालूम हो गया है। मुझे देखकर हर कोई दुतकारेगा।'

सावित्रीबाई ने उसके सिर पर हाथ रखकर उसे समझाया कि किसी बात की चिंता न करे। किन्तु वह रोते हुए बोली—'मेरा यह प्यारा बच्चा मैं आपकी गोद में डालती हूँ।' और सचमुच सावित्रीबाई ने उस काशीबाई नामक ब्राह्मण विधवा का अनैतिक संबंधों से जन्मा बालक गोद ले लिया। उन्होंने उसका नाम रखा—यशवंत। उसे पढ़ा-लिखाकर डाक्टर बनाया। उसकी शादी के लिए ईसाई लड़कियों के प्रस्ताव आते और वह उनसे विवाह के लिए इन्कार कर देता। अंतत: माली समाज के एक प्रतिष्ठित सज्जन श्री ज्ञानवा औष्णराव ससाणे की पुत्री राधाबाई से वह विवाह के लिए प्रस्ताव पर राजी हो गया। म. ज्योतिराव और सावित्रीबाई को बहुत आनंद हुआ लेकिन कुछ लोगों ने इस विवाह का विरोध किया। पड़ोसी फुसफुसाने लगे, रिश्तेदार धमकाने लगे। माली समाज के मूर्ख नेतागण, म. फुले और सावित्रीबाई को जाति से बहिष्कृत करने की बात करने लगे। किन्तु पति-पत्नी ने किसी के विरोध की परवाह नहीं की। अंत में दिनांक 4 फरवरी 1889 के दिन शुभमुहूर्त पर यशवंत और राधाबाई का विवाह समारोह संपन्न हुआ। इस विवाह समारोह में सतारा, कोल्हापुर, बड़ौदा, नासिक, अहमद नगर, मद्रास इत्यादि स्थानों से म. ज्योतिराव फुले के अनुयायी उपस्थित हुए। आज भी मिश्र विवाह अपवाद के रूप में ही होते हैं जिनमें वर-वधू के घरवालों का समर्थन नहीं होता। कभी-कभी तो दिल से विरोध होकर भी समर्थन का दिखावा किया जाता है। जबकि सौ वर्ष पहले तो मिश्र विवाह को पाप ही माना जाता था। ऐसे समय में यशवंत और राधाबाई का मिश्र विवाह एक आश्चर्यजनक घटना मानी गई। उसके बाद आधुनिक काल में इस विवाह को अपने ढंग का पहला विवाह समारोह ही कहना होगा।

महानिर्वाण

क्रान्तिसूर्य ज्योतिराव फुले का देहावसान 63 वर्ष की उम्र में 1890 को हुआ। उस समय सावित्रीबाई की उम्र 60 वर्ष की थी। पति की बीमारी में उन्होंने म. फुले की वर्णनीय सेवा-सुश्रषा की। किंतु उसका कोई लाभ न हुआ। उम्र होने के बाद भी वे सेहतमंद थे। पति के निधन से सावित्रीबाई को गहरा सदमा लगा। असहनीय दुख से अपना जीवन समाप्त करने का विचार भी उनके मन में आया परंतु मरने से पहले उनके हृदय में महात्मा ज्योतिराव का उपदेश गूंजने लगा—'मैं देह से भले ही मर जाऊँगा। किन्तु फिर भी मेरी शिक्षा और समाज चेतना का कार्य अमिट रहेगा। मैं यदि मर जाऊँ तो भी तुम दुःखी मत होना। मेरा जीवन कार्य अभी पूरा नहीं हुआ है। वह तुम जीवन भर करना।' पति के चले जाने के बाद उन्होंने महात्मा ज्योतिराव फुले द्वारा स्थापित सारी संस्थाओं की बागडोर सम्भाली। अत्यंत शांत संयत होकर और नए उत्साह से उन्होंने अपूर्ण कार्य जारी रखा। सन् 1896 में महाराष्ट्र में पुनः अकाल पड़ा। सैकडों लोग भूख प्यास से तड़प-तड़प कर मरने लगे। ऐसे समय सावित्रीबाई ने अकालग्रस्तों के लिए सरकार से रिलीफ कार्य प्रारंभ कराए।

इस अकाल से जनता उभरी भी नहीं थी कि 1897 में पुणे को प्लेग की बीमारी ने घेर लिया। यह महाकाल गांव-देहातों तक फैल गया। रोजाना सैकडों लोग मरने लगे। प्लेग की रोकथाम के लिए सरकार ने कारगर कदम न उठाए। प्लेग का रोगी खोज निकालने के लिए जगह-जगह गोरे सैनिक यम की तरह प्लेग का रोगी दिखते ही, उन्हें घरों से उठाकर ले जाने लगे। लोगों को प्लेग से ज्यादा गोरे सिपाहियों की दहशत सताने लगी।

ऐसे भयंकर दिनों में सावित्रीबाई द्वारा किए गए सेवा कार्य की मिसाल आज भी सुनाई जाती है। वे घर-घर जाकर लोगों को ढाढ़स बंधाती, उनकी तकलीफों की शिकायतों की गुहार उन्होंने सरकार तक पहुँचाई। उस समय प्लेग के दुष्परिणामों से और अपने सेवा कार्यों से सावित्रीबाई की सेहत गिरने लगी। वे बुखार से बीमार पड़ गई। उनकी तबीयत चिंताजनक होने लगी। उनसे मुलाकात के लिए मिलने वालों की लंबी कतार घर पर लगने लगी। 10 मार्च 1897 के दिन उनकी जीवन यात्रा समाप्त हो गई। कुछ लोगों की मान्यता है कि सावित्रीबाई भी प्लेग की शिकार हो गई थीं।

उनकी मृत्यु से सारा समाज दु:ख के सागर में डूब गया। सभी के हृदय पर अपने वात्सल्य की छाप छोड़ने वाली महान महिला देश को अंधेरे में छोड़ गई।

सावित्रीबाई में सतत् निष्ठा और सत्य के प्रति कर्तव्य भावना थी इसलिए वे सभी के आदर के लिए पात्र बनीं। ध्येय निष्ठा, मेहनती वृत्ति, लगन, आदि के बल पर वे लोकप्रियता के शिखर पर पहुँची। अपने कार्यों का प्रचार उन्होंने मिशनरी प्रणाली, समाज चेतना जागृत करने की निष्ठा से किया। उनका हृदय मानवता से ओतप्रोत था। गरीबी और संकटों पर विजय पाना उनकी विशेषता थी। उनका चरित्र एक आदर्श बना। जीवन में पराजय के क्षणों में भी वह टूटी नहीं। अपने कार्यों में उनकी सामाजिक जागृति एवं विकास की सामाजिक प्रतिबद्धता ही दिखाई देती है। वे हमेशा उचित बात कहतीं और उचित समयानुसार उचित कार्य करतीं। वे पिछली शताब्दी की एक मितभाषी, विवेकशील व विद्याशास्त्री महिला थीं। यदि हम व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर सावित्रीबाई के पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करें तो यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजली होगी।

सावित्रीबाई फुले की कविताएं

श्रेष्ठ धन दौलत

प्रातः काल में जाग जाओ बेटे। हाथ-मुँह धोकर बनो चुस्त।।
नहा धोकर बन तरो ताजा। करो माता-पिता को वंदन।।

स्मरण कर गुरुजनों को। पढ़ाई में लगाओ मन।।
समय बर्बाद ना करो। बड़ा ही कीमती है दिन।।

करो हासिल ज्ञान। विद्या को देवता जान।।
लीजिए विद्या का लाभ। दृढ़ निश्चय कर।।

विद्या धन है बच्चे। सभी दौलत से बढ़कर।।
विद्या का संचय जिस के पास। ज्ञानी मानते है उसे सब जन।।

अंग्रेजी पढ़ो

स्वालंबन का उद्योग, ज्ञान धन का संचय करो निरंतर।
विद्या के बिना व्यर्थ जीवन पशु जैसा, आलसी बन चुप ना बैठो।।

विद्या प्राप्त करें शूदों-अतिशूदों के दुख निवारण हेतु।
अंग्रेजी का ज्ञान हासिल करने का शुभ अवसर हाथ आया।।

अंग्रेजी लिख-पढ़कर जात-पात की दीवारों को ढहा दो।
भट-बामनों के षडयंत्रो के पिटारों को दूर फेंक कर।।

उसे आदमी कहें क्या ?

ज्ञान नहीं विद्या नहीं उसे अर्जित करने की जिज्ञासा नहीं।
बुद्धि होकर भी उस पर जो चले नहीं उसे इन्सान कहें क्या? ।।1।।
दे दो ईश्वर बिना काम किए बैठे बिठाए खाट पर।
ढोर-डंगर भी ऐसा कभी कहता नहीं।।
जिसका कोई विचार-अस्वार नहीं उसे इन्सान कहें क्या?।।2।।
पत्नी बिचारी काम करती रहें और फोकट में वह मौज उड़ाए।
पशु-पंछी में यह बात होती नहीं ऐसो को इन्सान कहें क्या? ।।3।।
दूसरों की जो मदद ना करे सेवा त्याग दया माया आदि।
जिसके पास यह सद्गुण नहीं उसे इन्सान कहें क्या? ।।4।।
पशु-पंछी, बंदर आदमी जन्म-मृत्यु सब को ही।
इस बात का ज्ञान जिसे नहीं उसे इन्सान कहें क्या?।।5।।

संत

जो वाणी से उच्चार करे, वैसा ही बर्ताव करे, वे ही नरनारी पूजनीय।
सेवा परमार्थ, पालन करे व्रत यथार्थ और होवे कृतार्थ, वे सब वंदनीय।।
सुख हो या दुख, कुछ स्वार्थ नहीं, जो जतन से कर अन्यों का हित।
वे ही ऊँचे, मानवता का रिश्ता जो जानते हैं वे सब, सावित्री कहे, सच्चे संत ॥

बालक को उपदेश

काम करना है जो आज उसे अब कर तत्काल॥
जो करना है दुपहरी में उसे कर अब जाकर॥
कुछ क्षणों के बाद का कार्य इसी वक्त को परा जोर लगाकर॥
हो गया समाप्त कार्य या नहीं न मौत पूछती है कारण॥

परिवार में शिक्षा अनिवार्य है।
यदि स्त्री एवं पुरुष में से एक को शिक्षा देनी हो
तो महत्व स्त्री शिक्षा को देना चाहिए।
क्योंकि जब पुरुष पढ़ता है
तो केवल एक पुरुष ही पढ़ेगा,
और जब एक स्त्री पढ़ेगी तो पूरा परिवार पढ़ेगा।

—डॉ. भीमराव अम्बेडकर—

isd **इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**

फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस, 62-ए, लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली-110067

टेलीफोन : 091-011-26177904, टेलीफैक्स : 091-011-26177904

ई-मेल : prakashan.isd@gmail.com, notowar.isd@gmail.com

वेबसाइट : www.isd.net.in